



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भील संस्कृति का जीवंत पर्व:-‘भगोरिया’

‘Bhagoria’–The Vibrant Festival of Bhil Culture

Dr.Priyanka Sahu

Assistant Professor history

Government mahakoshal arts and commerce college jabalpur

सारांश:-भील जनजाति का भगोरिया उत्सव मध्य प्रदेश (विशेषकर झाबुआ, अलीराजपुर, धार, खरगोन) में होली से पूर्व फाल्गुन माह में सात दिनों तक मनाया जाने वाला एक अत्यंत जीवंत, पारंपरिक और प्रेम-विवाह का अनूठा उत्सव है। भील संस्कृति की स्वतंत्रता, स्वाभिमान और सामाजिक संवाद को दर्शाता है। यह भीलों की रंग-रूपहली दुनिया है, जो सदियों से अपनी धरोहर पर गर्व करती है। भगोरिया एक आदिम यात्रा का निमंत्रण प्रेम-पर्व के रूप में आज लोकप्रिय हो गया है। परन्तु आंचलिक साहित्य के गहन अध्ययन व भील साहित्य की कमी की वजह से, भील इस प्राचीन क्षेत्र में अपनी व्यक्तिगत जनजातीय विरासत की पहचान बनाए रखने के बावजूद भी, अपनी आंचलिक साहित्यिक व सांस्कृतिक विरासत की अमिट छाप, जनजाति लोक-साहित्य व संस्कृति की दुनिया में नहीं छोड़ पाए, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध पत्र में भगोरिया के विषय में संपूर्ण जानकारी, भगोरिया हाट अर्थात् भगोरिया उत्सव से जुड़ी किवंदतियाँ, भगोरिया के तीन चरण, गोलगधेड़ो, उजाड़िया, सांस्कृतिक गतिविधियाँ, पारंपरिक वेशभूषा भगोरिया के महत्व और विविध क्षेत्रों के भगोरिया उत्सव के विषय में जानकारी प्रदान की गई है। शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य भगोरिया जो भील जनजाति के सांस्कृतिक जीवन का एक अभिन्न अंग है उसके विषय में प्रमुख तत्वों को प्रकट करना है।

की वर्ड :गोलगधेड़ो, उजाड़िया, टेसू पलाश, मांदल

गलालिया

प्रस्तावना

मध्य प्रदेश की धार नगरी पार करते ही झाबुआ की वादियों में मन रम जाता है। भूरी पहाड़ियों के बीच महुआ, करंजी और आम के पेड़ अठखेलियाँ करते दिखते हैं। हवा वसंत की खुशबू लाती है। आमों पर बौर आ चुके होते हैं, टेसू और पलाश के लाल-केसरिया फूल जंगल को होली खेलने के लिए तैयार कर देते हैं। मानो किसी ने जंगल पर ढेर सारा गुलाल बिखेर दिया हो। दिशाओं में फैली अनुगूँज, मधुर तान, लय-ताल पर जीवन आनंद मनाता है। सुरमई इच्छाएँ थिरकती हैं, उमंगें समय को गवाह बनाती हैं। यह भीलों की रंग-रूपहली दुनिया है, जो सदियों से अपनी धरोहर पर गर्व करती है। भगोरिया एक आदिम यात्रा का निमंत्रण है। भील जनजाति का भगोरिया उत्सव मध्य प्रदेश (विशेषकर झाबुआ, अलीराजपुर, धार, खरगोन) में होली से पूर्व फाल्गुन माह में सात दिनों तक मनाया जाने वाला एक अत्यंत जीवंत,

पारंपरिक और प्रेम-विवाह का अनूठा उत्सव है। यह हाट-बाज़ार, रंग-बिरंगे परिधानों, मांदल की थाप और जीवनसाथी चुनने (पलायन विवाह) का सांस्कृतिक उत्सव है जो भील संस्कृति की स्वतंत्रता, स्वाभिमान और सामाजिक संवाद को दर्शाता है।

जब हवाएँ गर्माहट का एहसास दिलाने लगती हैं, जब उनमें मादक खुशबू तैरने लगती है, गीतों में उन्माद भरने लगता है पाषाण तराशने वाले हाथ, मेहँदी की लालिमा से सुसज्जित होने लगते हैं, ताड़ी और महुआ में रस भरने लगता है, टेसू के फूल खिल उठते हैं और वसंत यौवन की सीमा पर पहुँच जाता है, तो समझ लीजिए कि भगोरिया का आगमन हो रहा है। यह भील समुदाय का अपना विशेष त्योहार है, जिसे हम फाल्गुन मास की प्रीत या भगोरिया के नाम से जानते हैं। यह ऐसा पर्व है जो हर युग की नई चमक को अपनी प्राचीन और संस्कृति एवं सभ्यता से जोड़ता है। यह न केवल मनुष्य का उत्सव है, बल्कि प्रकृति भी अपने संकेतों, फूलों, हवाओं और रंगों के साथ इसमें शामिल हो जाती है।

भील जनजाति का भगोरिया उत्सव मध्य प्रदेश (विशेषकर झाबुआ, अलीराजपुर, धार, खरगोन) में होली से पूर्व फाल्गुन माह में सात दिनों तक मनाया जाने वाला एक अत्यंत जीवंत, पारंपरिक और प्रेम-विवाह का अनूठा उत्सव है। यह हाट-बाज़ार, रंग-बिरंगे परिधानों, मांदल की थाप और जीवनसाथी चुनने (पलायन विवाह) का सांस्कृतिक उत्सव है जो भील संस्कृति की स्वतंत्रता, स्वाभिमान और सामाजिक संवाद को दर्शाता है।

लोकगीतों की धुन, बाँसुरियों की तान पर थिरकती टोलियाँ जब पारंपरिक वेशभूषा में मेले में आती हैं तो मन होली की मस्ती से झूम उठता है। भगोरिया प्रकृति के आनंद का प्रतीक है, जो अभावों और मायूसी पर विजय का घोषणा करता है। यह इंतज़ार की चरम सीमा पर प्राप्त वह क्षण है जो जिंदगी से भी बड़ा होता है। इसे समझने के लिए सांसारिकता को त्याग कर अबोध बालक की तरह प्रकृति के करीब जाना पड़ता है। जब दो अलग हाथ एक ही फूल को छूते हैं, तभी भगोरिया का मर्म खुलता है। इसे मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय से देखे व सुने जाने पर यह इसका मर्म निकलकर सामने आता है। झाबुआ, धार, खरगोन के जनजाति से मुस्कुराते टेसू, गुनगुनाते गीत, बजती बाँसुरी और थिरकते कदमों से कहते हैं—अपने सारे गम हमें साँप दो! फाल्गुन का महीना रंगों, वासंती अठखेलियों और उमंगों का है।

प्राचीन व मध्ययुगीन इतिहास में, मालवा की सरहदी के नीचे बसे दो छोटे शहर भगोर और झाबुआ के नाम से सुविदित हैं। भगोर, झाबुआ शहर से कहीं ज्यादा प्राचीन है। आज यह भू-भाग, भील व उनसे संबंधित जनजातीय उपशाखाओं जैसे भिलालों, पटलियों व बारेलों सहित उनके आवास एवं विशिष्ट सांस्कृतिक, ऐतिहासिक व साहित्यिक विरासत की पहचान बनकर न केवल मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात व महाराष्ट्र में लोकप्रिय रूप में जाना जाता है, बल्कि अखिल भारत में तथा कुछ सीमा तक सम्पूर्ण विश्व में अपनी ही स्थानीय शैली में, आदिवासियों की विशिष्ट सांस्कृतिक धरोहर को पहचान बनाता ही चला जा रहा है, यह तथ्य अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं है। देश व विदेश के प्रसिद्ध विद्वानों, साहित्यकारों और मानवशास्त्रियों ने यहाँ के भीलों के प्रमुख पर्व या तीज-त्यौहारों जैसे भगोरिया, गल व गड आदि पर्वों से जुड़ी भील-भिलालों की सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा भावनात्मक विरासत का खुलकर दिलचस्प वर्णन व व्याख्या की है। भगोरिया प्रेम-पर्व के रूप में आज लोकप्रिय हो गया है। हम उसे प्रेम-पर्व कहते हैं। आंचलिक साहित्य के गहन अध्ययन व भील साहित्य की कमी की वजह से, भील इस प्राचीन क्षेत्र में अपनी व्यक्तिगत जनजातीय विरासत की पहचान बनाए रखने के बावजूद भी, अपनी आंचलिक साहित्यिक व सांस्कृतिक विरासत की अमिट छाप, जनजाति लोक-साहित्य व संस्कृति की दुनिया में नहीं छोड़ पाए।

भीलों के इस प्राचीन सांस्कृतिक भू-भाग, भगोर-झाबुआ का वर्णन करते हुए, भारतीय भाषाओं के विशेषज्ञ श्री जॉर्ज ग्रियर्सन ने भीलों को व भीली (भाषा) को मुख्यतः 47 भागों में सुनियोजित रूप से विभाजित किया तथा भीली की विभिन्न

उप-बोलियों के आधार पर भी, भील भाषा-क्षेत्र को इन्हीं नामों से सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में भी विभाजित किया है। झाबुआ जिले का प्राचीन नगर भगोर, जिसके अवशेष मात्र आज भीली लोक-साहित्य व लोक गीतों में उल्लेखित कुंवरी जासमा आडेणी द्वारा बनाया गया भगोर का प्राचीन जलाशय, प्राचीन पातालेश्वर महादेव मंदिर आदि के रूप में ही विद्यमान हैं। प्राचीन भगोर भील-भाषा, साहित्य व संस्कृति का केन्द्र कहा गया है, यहीं कहीं एक समय पर बसा हुआ था। किवंदंतियों में कहा जाता है कि प्राचीन काल में इसी जगह एक बड़ा शहर, भृगु ऋषी के नाम से बसा था। इसी शहर के नाम से भीलों का यह प्राचीन सांस्कृतिक क्षेत्र भगोर कहलाया व यहाँ बसने वाले जनजाति भील भगोरिया के नाम से अपनी अलग पहचान विश्व स्तर पर बनाए हुए हैं। भीलों में आज भी एक लोकप्रिय कहावत प्रचलित है जिसमें कहा गया है-‘भागी भागोर, वही इन्दोर अने रतळाम’ (भगोर के टूटने या बिखरने से इंदौर और रतलाम शहर बसे) इसका सीधा सा अर्थ यही है कि यह कितना प्राचीन व विशालतम होगा उस जमाने में। कौन थे इस भगोर को बसाने वाले? और वे भी कौन थे जो प्राचीन हिन्दू सभ्यता और संस्कृति के नगण्य अवशेष छोड़ गये और क्यों पतन हो गया इस बने बनाए शहर का? इन प्रश्नों के उत्तर इतिहासकार नहीं दे पा रहे हैं। यहाँ बसने वाले भील कहलाते और यहाँ की बोली या भाषा भोली कहलाती है। डॉ. मधियास ने 1964 में भगोर के भीलों पर 570 पृष्ठ का एक विस्तृत ग्रंथ जर्मन भाषा में लिखा, जिसका हिन्दी व इंग्लिश अनुवाद करना अभी बाकी है। एक और लोक-कथा प्राचीन भगोर शहर की अथाह धन-सम्पत्ति के बारे में यहाँ के भीलों में प्रचलित है जो इस प्रकार है:- भगोरियों भेरू, कटारा नी बावड़ी, मांदल्यो मोवड़ो, केहरयो खाल, इना नी बस मां, बारा गैंडा माल से। (भगोर शहर का भेरू, कटारों की बावड़ी, मांदल्यो खाल का मोवड़ा और केसरिया खाल के बीच, बारह गोड़े नहीं उठा सके, इतना सोना-चाँदी यहाँ गड़ा हुआ है।) इसी तरह की अनेकों भीलो लोक कथाएँ भी प्रचलित हैं। होली के पूर्व के अठबारे में यहाँ लगने वाले अंतिम हाटों को, जो रबी की फसल के तुरन्त बाद लगते हैं और यहाँ के भील जिसमें सर्वाधिक क्रय-विक्रय करते हैं, उस हाट को भगोरिया हाट या फिर गललिया हाट कहते हैं। इस भगोरिया या गललिया हाट की विरासत को जिसकी वजह से आज यह हाट सम्पूर्ण विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बनाता जा रहा है।

झाबुआ जिले में 2001 की जनगणना अनुसार जनसंख्या 10,25,048 है जिसमें करीब 85% जनजाति हैं आठ तहसीलों के 12 विकासखण्डों में लगभग छोटे-बड़े 50 भगोरिया हाट बड़े जोर-शोर से मनाए जाते हैं। वैसे भारत में आज, कुल साढ़े चार हजार संस्कृतियाँ विद्यमान हैं जिनकी अपनी अलग ही सांस्कृतिक धरोहर व विशिष्ट पहचान हैं। जिसका उदाहरण भगोरिया में उस विशिष्ट एवं प्राचीन भील-संस्कृति के मूल व प्रमुख तत्त्व प्रबल रूप से दृष्टिगत होते व स्पष्ट रूप में उभरकर सामने अभिव्यक्त होते हैं, जैसे लोक-जीवन, लोक-गीत, लोक-नृत्य, भील-व्यंग्य, शारीरिक अलंकरण, सादगी, सौंदर्य बोध, डोफाई (भील पर्व), सामूहिकता, कलात्मकता, परिश्रम, हास्य, प्रेम आदि कुछ प्रमुख सांस्कृतिक तत्त्वों के रूप में उभरकर अभिव्यक्त करते हैं। इन सांस्कृतिक तत्त्वों से जुड़े उनके समाज के अतीत के इतिहास, सामाजिक उद्भव, लोक जीवन के द्वारा अपनी ही सांस्कृतिक धरोहर की पहचान आज भी बनाए हुए हैं, जो इन दिनों भगोरिया का प्रमुख आकर्षण हैं।

प्रमुख रूप में आज भगोरिया, प्राचीन भगोर प्रांत (झाबुआ जिले के भील आदिवासियों के एक सांस्कृतिक विरासत का भाग) में तथा उससे संबंधित पड़ोसी भील क्षेत्रों जैसे भील-राठ (जोबट-अलीराजपुर), पलवाड़ (थांदला कांकणवाणी) व पेटलावद (मालवा) हैं। इस तरह झाबुआ, थांदला, जोबट, अलीराजपुर, नानपुर, चाँदपुर, भाबरा, उमराली, खट्टाली आदि कुछ विशेष भगोरिया हाट क्षेत्र हैं। सबसे प्यारा और मोहक भगोरिया झाबुआ (रविवार), अलीराजपुर (सोमवार), उमराली,

नानपुर, चांदपुर, खाली और भाबरा (सोमवार) का होता है। झाबुआ में थांदला और मेघनगर तहसील के कुछ भागों को भीली परिक्षेत्र की दृष्टि से पलवाड़ (थांदला ब्लॉक-झाबुआ) जाता है। इस तरह पलवाड़, भगोर व राठ को मिलाकर झाबुआ जिला भीलों के भगोरिया का एक विशेष सांस्कृतिक परिक्षेत्र बनता है से आज बहुल रूप से भील तथा अन्य लोग परिचित हैं। भील भगोरिया के आदर्शों, गरिमाओं एवं भव्यता के कारण अन्य क्षेत्रों के पर्वों की सांस्कृतियाँ भी फीकी पड़ जाती हैं।

भगोरिया उत्सव का समय

यह सिलसिला भगोरिया हाट से शुरू होता है। फागुन पूर्णिमा से सात दिन पहले हाट भरने लगते हैं और धुरेड़ी पर चरम पर पहुँचते हैं। इस समय अधिकतर लोगों को काम का मेहनताना मिलता है तथा खर्च करने के लिए उनके पास पर्याप्त धन होता है। इस समय विश्व के कोने कोने से इस जनजाती के लोग यहाँ वापस आते हैं। अतः यह विवाह करने के लिए अथवा अपने संतानों का विवाह करवाने के लिए सर्वोत्तम समय होता है। भील युवक-युवतियाँ बाँसुरी बजाते, सज-धजकर आते हैं। लड़कियाँ सहेलियों के साथ, लड़के मित्रों के साथ। पूरा गाँव-बूढ़े, बच्चे, स्त्री-पुरुष-मेले में शामिल होते हैं। भगोरिया हाट में जीवनसाथी चुना जाता है। इसे दो भागों में बाँटा जा सकता है-भगोरिया मेला और भगोरिया त्योहार। मेला प्रेम प्राप्ति का प्रयास है, जबकि त्योहार आध्यात्मिकता और वैराग्य में रमने का। दोनों साथ-साथ शुरू होते हैं। त्योहार उसी महीने समाप्त हो जाता है, लेकिन मेला जिसने अपनाया, वह जन्म-जन्म तक बंधा रहता है। भगोरिया की सबसे चर्चित और अक्सर गलत समझी जाने वाली परंपरा है जीवनसाथी का चुनाव। लोग इसे 'भागने' का मेला कहते हैं, लेकिन असल में यह 'चुनने' और 'स्वीकारने' की एक बेहद खूबसूरत सामाजिक व्यवस्था है।

परंपरा के अनुसार, यदि कोई युवक किसी युवती को 'पान' भेंट करता है और युवती उसे स्वीकार कर लेती है, तो यह उनके आपसी प्रेम का मूक संकेत होता है। कई जगहों पर गुलाल लगाने की भी परंपरा है। यह प्रेम की वह सहज और सार्वजनिक स्वीकृति है। इसके बाद होने वाले सामाजिक रीति-रिवाज उनके रिश्ते को विवाह की पवित्रता में बदल देते हैं। दरअसल यह परंपरा हमें सिखाती है कि प्रेम में जबरदस्ती नहीं, बल्कि आपसी सहमति की खुशबू होनी चाहिए।

लोक श्रुतियों के अनुसार, भगोरिया का इतिहास राजा भोज के समय से जुड़ा है। माना जाता है कि दो भील राजाओं, कासूमार और बालून ने भागोर नामक स्थान पर इस मेले की शुरुआत की थी। धीरे-धीरे यह परंपरा आसपास के क्षेत्रों में फैल गई और 'भागोरिया' के नाम से अमर हो गई। ऐतिहासिक प्रमाण चाहे जो भी कहें, लेकिन भील समाज के लिए यह उनकी वीरता और पूर्वजों के प्रति सम्मान प्रकट करने का एक माध्यम भी है।

भील युवक कान में मूँदड़े-टोटवा, गले में बनजारी साँकल, हाथों में चाँदी के कड़े, सिर पर लंबा साफा बाँधते हैं। रंग-बिरंगे अंगरखे, धोती पहनते हैं। टोलियाँ बनाकर बाँसुरी बजाते आते हैं। दूर से धुन सुनते ही युवतियाँ मेला देखने निकल पड़ती हैं।

भगोरिया नृत्य से पहले थान पर होम-पूजा होती है। फिर मादल, थालियाँ, शहनाई, बाँसुरी बजती हैं। भीलनियाँ गोपियों की तरह नाचती हैं-पाँव आगे-पीछे, कुण्डल हिलते हुए। ताल ५-६ मात्राओं की होती है, उमंग के साथ तेज़ होती जाती है। यह आनंद का उमड़ता आवेग है। भगोरिया नृत्य प्रकृति की कृपा, फसल, इंद्र की मेहर, पूर्वजों का आशीर्वाद और परिश्रम का फल है। यह सपनों का इंद्रधनुष धरती पर उतरता है। आस्थाएँ झुकती हैं, अनुष्ठान रूह में उतरते हैं। सारा कल्मष, कटुता प्रेम में बदल जाती है। जीवन उत्सव बन जाता है।

भगोरिया हाट अर्थात् भगोरिया उत्सव से जुड़ी किवंदतियां

एक किवंदती के अनुसार इस उत्सव के सर्वप्रथम नायक एवं नायिका भाव एवं गौरी थे। यह शिव एवं पार्वती के ही नाम हैं। इसी कारण इस उत्सव को भगोरिया कहा जाता है। एक अन्य किवंदती के अनुसार भागोर के राजा ने इस क्षेत्र पर विजय प्राप्त की थी। राजा ने अपने सैनिकों को यह अनुमति दी थी कि होली से कुछ दिन पूर्व लगते इस हाट में वे अपनी पसंद की युवती को प्रेम प्रस्ताव दे सकते हैं। यदि युवती की स्वीकृति हो तो दोनों पलायन कर सकते हैं। उस समय से अब तक यह एक प्रथा बन चुकी है जिसका अब भी किसी ना किसी रूप में पालन किया जाता है।

भगोरिया के तीन चरण:

भगोरिया (पहला और दूसरा दिन): इसमें लोग पारंपरिक वेशभूषा में ढोल-मांदल के साथ नाचते-गाते हाट में आते हैं।

गोल गधेड़ो (अगले चरण): यह परंपरा का एक प्रमुख हिस्सा है, जिसमें युगल प्रेम प्रस्ताव के रूप में एक-दूसरे को पान खिलाते हैं और फिर सामाजिक स्वीकृति से साथ रहने के लिए पलायन कर जाते हैं।

उजाड़िया (अंतिम दिन): यह मेले के समापन का दिन है, जब लोग अपने घरों को लौटते हैं।

सांस्कृतिक गतिविधियाँ:

भगोरिया का जिस दिन मेला लगता है, पूरा क्षेत्र एक विलक्षण के स्थानीय रोमांच से मदमय हो जाता है। भगोरिया हाट के दिन गाँवों, फलियों और घरों में एक विशेष उत्साह, मनोवैज्ञानिक उन्माद व सरगमीं हल्के से बिजली के करंट सी सम्पूर्ण क्षेत्र के वासियों शेषकर युवाओं में सहज रूप में फैल जाती है। वे नैसर्गिक व सहज उन्माद से सराबोर हो उठते हैं। तब गाँवों में ढोलों के संगीत स्वर दूर तक प्रतिध्वनित होते हैं। कहीं धुंधरुओं की छम-छम, तो कहीं की शंकार, कहीं कुण्डी या फिर शहनाई का तीव्र नाद, कहीं 1 की थाप से उपजते संगीत के मधुर स्वर, बड़ी दूर-दूर तक वन-में, पहाड़ों की घाटियों, नदियों व जलाशयों की तरंगों, खेतों व हानों में अविरल और सहज प्रतिध्वनित हो उठते हैं।

मार्गों को जगह-जगह युवक-युवतियाँ, ग्वाल, बालक-बालिकाएँ नृत्य करतीं, गीत गाती हुई वाहनों को रोकतीं, उनसे प्रेमपूर्वक, रूपये उगाहते, ललकारते, बीड़ी के लिये संकेतों द्वारा निवेदन करते, जगह-जगह देखी जाती हैं। भील-भिलाओं, वारेलों-पटलियों व राठियों की छोटी-बड़ी व रंग-बिरंगी टोलियाँ अपने घरों व गाँवों से निकलकर भगोरिया के हाटों की तरफ, उत्साह, उमंग, मौज-मस्ती व निर्भीकता सहित बढ़ती हैं। लाल, पीली, हरी विविध रंगों की पोशाके, घाघरा चुनरी व ब्लाउज धारणकर, खेतों मार्गों, पगडंडियों से नाचते, गाते, झूमते, वहाँ का दृश्य बड़ा सुंदर व सुभावना लगता है। जनजाति लड़कियों के सज्जित माथे, हंसली, तोरण्ये, सीड़, कड़े, कूड़े, सांकली, , हाथफूल, बाह्ये, कणदौरे आदि आभूषण गले हाथों कानों, कमर और पैरों में चाँदी, कदीर, स्टील, सोने, मोती के धारण किये और जनजाति लड़के हाथों में तीर-कमान, धारिगे, गोफन, तलवारे, लाठियाँ (हथियार आजकल वर्जित हैं काफी जगह) से सजकर युवक-युवतियाँ होल, मौदल की थाप पर नाचते, गाते, उछलते, दौड़ते व झूमते हुए भगोरिया हाट के स्थानों की ओर एकता व भाई-चारे से सहभागिता हेतु लपक कर बढ़ते हैं।

पारंपरिक वेशभूषा: युवक-युवतियां पारंपरिक पोशाकें, जैसे कि रंग-बिरंगी ओढ़नियाँ, चाँदी के आभूषण और पारंपरिक वेशभूषा में सजे हुए आते हैं।

हाट-बाज़ार: ये हाट सिर्फ वस्तुओं की खरीद-फरोख्त नहीं, बल्कि पारंपरिक वाद्ययंत्रों (ढोल, मांदल, बांसुरी) की धुन पर नाचने-गाने का एक अनूठा मिलन स्थल है।

पान का आदान-प्रदान: यह उत्सव साथी चुनने का माध्यम है, जहाँ पान खिलाकर सहमति दी जाती है।

यह भील जनजाति की परंपराओं, लोक-संगीत और सामाजिक सामंजस्य का प्रतीक है। यह जनजाति संस्कृति के संरक्षण का एक जीवंत माध्यम है। भगोरिया उत्सव के विषय में मैंने जितना कुछ पढ़ा, सुना तथा देखा, उसके आधार पर मेरा विश्लेषण यह कहता है कि किसी समय यह युवक-युवतियों के लिए एक दूसरे से मिलने एवं अपनी भावनाएं प्रकट करने का अवसर रहा होगा। कदाचित्त उन में से कुछ ने इसका लाभ उठाते हुए अपने साथी के संग पलायन भी किया होगा। समय के साथ इसे मान्यता प्राप्त होने लगी तथा यह एक परंपरा बन गयी।

झाबुआ के अन्य स्थानों के भीलों में गलालिया और होली-पर्व, इन के दिन की संध्या में मनाया जाता है एक अन्य जनजाति पर्व गल देवरया जो असंभव, अनहोना काम को सफल करने वाले गल देवरया से मानता लेने और उस दिन धन्यवाद के तौर पर बकरे का भोग चढ़ाने के लिये, वहाँ गल के मचान के समक्ष भक्त-जन आते हैं। होलिका दहन, गल आदि की वजह से भी भगोरिया के महत्त्व में वृद्धि होती है।

संध्या होते ही गलालिया के प्रेमी, सवारी बसों, दुपहिया वाहनों, साइकिलों, बैलगाड़ियों, पैदल आदि से सड़कों खेतों, पहाड़ियों, जलाशय आदि को पार करते हुए अपने घरों में खिन्न मन से धीरे-धीरे पहुंचने लगते हैं दिन भर की मौज मस्ती व थकान उनके मन को यह सोचकर और अधिक भारी कर देती है कि हमारा प्रेम पर्व भगोरिया फिर कब आएगा ?

लहरी नृत्य

इस नृत्य का प्रदर्शन करते भील युवक एवं युवतियां सागर की लहरों के समान लहराते हुए नृत्य करते हैं। युवक हाथों में धनुष बाण तथा युवतियाँ हाथों में एक संगीत वाद्य लेकर भगोरिया उत्सव का यह नृत्य करते हैं।

सांस्कृतिक महत्व: भगोरिया का मतलब केवल 'प्रेम पर्व' नहीं, बल्कि पुरानी मान्यताओं के अनुसार इंद्रदेव से अच्छी बारिश की प्रार्थना और जनजाति युवाओं के लिए जीवनसाथी चुनने का अवसर है।

सामाजिक संरचना: यह त्योहार आपसी मेलजोल बढ़ाता है, जहाँ भील जनजाति के युवा अपनी संस्कृति का प्रदर्शन करते हैं, पारंपरिक परिधान और नृत्य के साथ।

अब भगोरिया हाट में पारंपरिक व्यापार के साथ-साथ व्यावसायिक गतिविधियाँ (आधुनिक खरीदारी) भी बढ़ गई हैं।

सामाजिक परिवर्तन: पारंपरिक वधू मूल्य (दापा) प्रथा में बदलाव आ रहा है, जहाँ मुद्रा का प्रचलन बढ़ा है, लेकिन विवाह के लिए आपसी सहमति की परंपरा आज भी कायम है।

भगोरिया उत्सव अपने अंदर इतने रंग समाहित किया होता है कि अलग-अलग स्थान पर भी भगोरिया का रंग अलग-अलग दिखाई देता है हम कुछ स्थानों के बारे में चर्चा कर सकते हैं।

झाबुआ के भील जनजाती का भगोरिया उत्सव

भगोरिया हाट अथवा बाजार का कोई निश्चित स्थान नहीं है। प्रत्येक वर्ष, होली से पूर्व के सात दिनों तक, प्रत्येक दिवस एक भिन्न गाँव इस बाजार का आयोजन करता है। निर्धारित स्थल के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए कोई भी स्थानीय समाचार पत्र देख सकते हैं। नीला, लाल, हरा, जामुनी, नारंगी तथा कहीं कहीं दो रंगों का मिश्रण। इन युवतियों के मोहक आभूषण ठोस चांदी के होते हैं। ओढ़नियाँ भी एक ही प्रकार से ओढ़ी हुई होती हैं।

वालपुर के भगोरिया

यहाँ का वातावरण एक ठेठ ग्रामीण मेले का सा होता है। चारों ओर कई दुकानें हैं। इनमें हलवाईयों की दुकानें तो प्रमुखता से होती ही हैं, साथ ही मिट्टी के बर्तन से लेकर चांदी के बर्तन तक, गोदना गोदने से लेकर खिलौनों की दुकान तक, फलों से लेकर भाजी तक, अनेक रंगबिरंगी दुकानें होती हैं।

खेल व मनोरंजन के साधन उपलब्ध होते हैं। लोग नित्योपयोगी वस्तुओं की खरीदी और खाद्य पदार्थों का स्वाद भी लेते हैं। स्त्रियों को देख ऐसा प्रतीत हो रहा होता है की मानो यह उन कुछ अवसरों में से है जब वे मन भर के सज सकती हैं, श्रृंगार कर सकती हैं एवं घर से बाहर निकल कर मौज मस्ती कर सकती हैं क्योंकि हमने इन स्त्रियों को समूहों में हँसते-खिलखिलाते हुए घूमते दिखाई देते हैं। कुल मिलाकर सम्पूर्ण दिवस भरपूर हर्षोल्लास एवं उत्साह का होता है। उस दिन कितने जोड़े प्रेम-बंधन में बंध जाते हैं।

राणापुर का भगोरिया उत्सव

यह झाबुआ के अधिक समीप है। राणापुर के भगोरिया हाट में अपेक्षाकृत अधिक भीड़ होती है। हाट एवं उत्सव वालापुर के समान होती है किन्तु वस्त्रों एवं आभूषणों की शैली अत्यंत भिन्न होती है, यहाँ कन्याओं ने छाप के, विशेषतः बांधनी छाप के वस्त्र धारण करते हैं वालापुर में बिना छाप के, सादे रंगों के वस्त्रों का चलन था। चांदी के भारी होते हैं, किन्तु उनकी बनावट बिल्कुल भिन्न होती है। यहाँ वालापुर से पृथक मेला होता है।

भगोरिया हाट की दुकानें

भगोरिया हाट की छोटी छोटी दुकानें अत्यंत अनोखी हैं मैं चांदी के कुछ आभूषण की दुकान, मिट्टी के कुछ अनोखे तवे देखे जिन्हें इस प्रकार पकाया गया था कि उपयोग से पूर्व इन्हें तोड़ना पड़ता है। पुराने रबर के टायरों से चप्पल एवं बाल्टियां बनाकर उनका पुनर्नवीनीकरण किया जाता है। कुछ बुद्धिमान दर्जी विदेशी पर्यटकों के लिए तत्काल वेशभूषा सिलकर तैयार कर देते हैं। इसके लिए वे अपने घर के हथकरघे में बुने हुए वस्त्रों का प्रयोग करते हैं।

उपसंहार

बिना किसी आधुनिक सुविधा की चाह के पूरी जिंदगी अभावों को गले लगाकर जी लेना, दुख-तकलीफ़ को ठुकराकर एक पल के आनंद में सारी जिंदगी समेट लेना—यही भगोरिया का सार है। इस उत्सव में इतनी जीवंतता होती है कि सूरज कब ढल जाता है, पता ही नहीं चलता। लोकगीत ऐसे होते हैं कि शब्दों का अर्थ समझ न आए, फिर भी कान उनसे चिपके रहते हैं। चेहरों पर भाव इतने जीवंत कि कैमरा उन्हें पकड़ पाने में नाकाम रहता है। सज-धज इतनी स्वाभाविक कि प्राकृतिक सौंदर्य को अलग से तलाशने की ज़रूरत नहीं पड़ती। जब कोई विशेष व्यक्ति सामने आता है तो आँखों में चमक जाग उठती है। यह चमक लज्जाहीन नहीं होती, बल्कि इसमें इतना साहस होता है कि वह समाज की अर्थपूर्ण नज़रों का डटकर मुकाबला करती है। इस एक सप्ताह के आयोजन में पूरी जिंदगी के रिश्ते, शर्तें और वादे तय हो जाते हैं। हर रोज़ नए भगोरिया में वही इंतज़ार रहता है, वही उत्सुकता। दिन उस व्यक्ति को देखने में और रातें नाच-गाने में बीत जाती हैं।

भारत चित्ताकर्षक उत्सवों की धरती है। भारत में आप जहां भी जाएँ, आप को कई मनमोहक, अनोखे एवं मनोरंजक उत्सव दिखाई देंगे। भगोरिया केवल आदिवासियों के प्रेम प्रदर्शन का मार्ग नहीं है वह तो उनके विविध जीवन मूल्यों को प्रदर्शित करने वाला एक महत्वपूर्ण आधार है। भगोरिया एक आदिम यात्रा का निमंत्रण है। आज जब हम 2026 के

पायदान पर खड़े हैं, भगोरिया के सामने कई चुनौतियां हैं। सेल्फी संस्कृति और सोशल मीडिया के प्रभाव ने मेलों की निजता को थोड़ा प्रभावित किया है। बाज़ारी ताकतों ने स्वदेशी हाटों की जगह प्लास्टिक और बनावटी वस्तुओं को बढ़ावा दिया है।

किंतु, प्रशंसा करनी होगी उस जनजाति युवा की, जो उच्च शिक्षा प्राप्त करने और शहरों में नौकरी करने के बावजूद, भगोरिया के इन सात दिनों में अपने गाँव लौट आता है। वह कोट-पेंट उतारकर अपनी पारंपरिक पोशाक पहनता है और मांदल की थाप पर पूरी शिद्दत से थिरकता है। भगोरिया केवल आदिवासियों का पर्व नहीं है, यह समूचे भारत की सांस्कृतिक विविधता का गौरव है। यह हमें याद दिलाता है कि मिट्टी से जुड़ाव ही इंसान को आसमान छूने की ताकत देता है। प्रशासन और नागरिक समाज का यह दायित्व है कि हम इस उत्सव की मौलिकता को बचाए रखें। हमें पर्यटन के नाम पर इसे 'तमाशा' बनने से रोकना होगा और इसकी सांस्कृतिक शुचिता को बनाए रखना होगा। जब भी फाल्गुन की हवा में रंगों की आहट होती है, मुझे झाबुआ की वे पगडंडियाँ याद आती हैं। भगोरिया जीवन का वह राग है, जो हमें सिखाता है कि अभावों में भी कैसे भरपूर जिया जाता है। यह उत्सव है साहस का, सामूहिकता का और उस चिरंतन प्रेम का जो सदियों से इस मिट्टी में बसा हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- (1) पाटिल, डॉ. अशोक डी "भील जनजीवन और संस्कृति (Bheel Janjivan aur Sanskriti): मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
- (2) श्रीवास्तव, अनीता, "Tribal Culture, Continuity And Change - A Study of Bhils In Rajasthan"
- (3) नायक, टी. बी. "The Bhils: A Study (1956):
- (4) बच्चन कुमार "The Bhils: An Ethno-historic Analysis
- (5) तिवारी शिवकुमार, मध्य प्रदेश की जनजातीय संस्कृति, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी
- (6) तिवारी शिवकुमार, भारत की जनजातियाँ,
- (7) तिवारी शिवकुमार, एवं शर्मा कमल, मध्यप्रदेश की जनजातियाँ पृ.क्र.19
- (8). कुमार प्रमिला, मध्यप्रदेश का प्रादेशिक भूगोल पृ.क्र.192
- (9). ठही राघवैया, "ट्राइबल्स ऑफ इंडिया" आदिम जाति सेवक संघ पृ.क्र.92
- (10) डिलीज राबर्ट्स 'दि भील्स ऑफ वेस्टर्न इंडिया' पृ.क्र.90
- (11). दुबे एस. सी ट्राइबल हेरिटेज ऑफ इंडिया पृ.क्र.192